डियर लाइफ

एलिस मुनरो

कभी-कभी मैं और माँ बातें करते थे, ज़्यादातर माँ के युवतर दिनों की बातें। अब बमुश्किल ही मैं उसकी कोई बात काट पाती।

कई बार उसने मुझे उस मकान की कहानी सुनाई, जिसमें अब एक हाथ वाला सैनिक वैटी स्ट्रीट्स रहा करता है। वही, जो मेरी स्कूली पढ़ाई का बेहद मज़ाक उड़ाया करता। कहानी उसके बारे में न होती, बल्कि किसी और के बारे में, जो कि उसके मकान में रहती थी और बरसों पहले जो मर गई। वह एक बूढ़ी पागल थी, मिसिज़ नेटरफील्ड। हम सभी किराने के सामान का ऑर्डर फोन पर देते थे और उसकी होम डिलीवरी हो जाती थी। उसी

तरह मिसिज़ नेटरफील्ड भी फोन से ही ऑर्डर देती थी। एक दिन दुकान वाला बटर भेजना भूल गया या शायद वह खुद ही बटर ऑर्डर करना भूल गईं, पर जब दुकान वाले का छोकरा ट्रक का पिछला दरवाज़ा खोलकर माल उतार रहा था, मिसिज़ नेटरफील्ड का ध्यान गया कि बटर तो है ही नहीं। पर जैसे वह इस बात के लिए पहले से तैयार थीं। इसीलिए उन्होंने अपने हाथों में कुल्हाड़ी थाम रखी थी। उन्होंने कुल्हाड़ी लहराते हुए उस छोकरे को दौड़ा लिया। बेचारा हकबकाकर भागा, किसी तरह ट्रक में चढ़ा और पिछले दरवाज़े बन्द किए बिना ही वहाँ से ट्रक दौड़ा ले गया।

इस कहानी में कुछ बातें बेहद पहेलीनुमा थीं। यह बात और है कि उस समय मैंने उन बातों पर ध्यान भी नहीं दिया था, न ही माँ ने, पर आज मैं सोचती हूँ कि आखिर कैसे उस बूढ़ी को पहले ही अन्दाज़ा हो गया था कि इस सामान में बटर नहीं होगा? आखिर क्यों वह पहले ही हथियार लेकर तैयार खड़ी थी, जबकि उसे पता था कि छोकरा महज़ डिलीवरी करता है, सामान पैक करने में उसकी कोई भूमिका नहीं? क्या वह हमेशा ही अपनी कुल्हाड़ी अपने साथ लिए चलती थी कि किसी के उकसाने पर उसे लहरा दे?

कहते हैं कि जब मिसिज़ नेटरफील्ड जवान थीं, तब बेहद सुन्दर और शालीन थीं।

मिसिज़ नेटरफील्ड से जुड़ी एक और कहानी है, जो ज़्यादा दिलचस्प है क्योंकि उस कहानी से मैं भी जुड़ी हूँ और वह हमारे ही घर के इर्द-गिर्द घटी थी।

वह पतझड़ का कोई सुन्दर-सा दिन था। मैं बेहद छोटी थी। लॉन की हरियाली में मुझे अपने पालने में सुलाया गया था। उस दोपहर मेरे पिता घर पर नहीं थे, शायद वह खेतों में अपने पिता की मदद करने गए थे, जैसा कि वह कई बार करते थे। मेरी माँ मोरी के पास कपड़े धो रही थी। मैं पहली सन्तान थी। तो मेरे होने का खासा उत्सव मना था। बहुत सारे कपड़े थे, रिबन्स थीं। इन सब चीज़ों को ठण्डे पानी में बहुत एहतियात से धोना पड़ता था। मेरी माँ जहाँ बैठी काम कर रही थी, उसके सामने कोई खिड़की नहीं थी। बाहर देखने के लिए अपनी जगह से उठकर कमरे से बाहर आना होता, उत्तर वाली दीवार तक जाना होता, फिर वहाँ की खिड़की से देखना होता। तब मैं लॉन में पालने में लेटी दिख सकती थी। वहीं से बाहर की सड़क भी दिखती थी और घर का मुख्य फाटक भी।

आखिर ऐसा क्या हुआ होगा कि मेरी माँ के मन में अपना काम बीच में ही छोड़कर खिड़की तक आने का खयाल आया होगा? आखिर क्यों उस समय वह खिड़की पर आकर सड़क देखने लगी थी? उसे किसी का इन्तज़ार नहीं था। मेरे पिता को आने

में अभी समय था। शायद माँ ने उनसे लौटती दफा किराने का कुछ सामान लाने के लिए कहा था। शायद वह उस रात कुछ खास बनाने वाली थी। शायद वह सोच रही थी कि पिता को समय पर घर आ जाना चाहिए। उन दिनों वह अच्छा खाना बनाती थी, कमोबेश, अपनी सास से तो बेहतर ही बनाती थी। उन सभी औरतों से बेहतर जो पिता के परिवार में रही होंगी।

या हो सकता है कि पिता किराने का सामान लेने न गए हों बल्कि कपड़े की कोई डिज़ाइन पसन्द कर रहे हों। ऐसा कोई कपड़ा जिसे माँ अपने लिए सिलना चाहती हो।

उसने कभी नहीं बताया कि आखिर उसके मन के भीतर उस समय क्या आया था।

मेरे पिता के परिवार वाले मेरी माँ की रसोई को ही शक की निगाह से नहीं देखते थे, बल्कि वे उसके कपड़ों की भी निन्दा करते रहते थे। मुझे याद है, जब वह मोरी में चीज़ें धो रही होती, तब भी वही दोपहर वाली पोशाक ही पहने हुए होती। खाना खाने के बाद वह आधा घण्टा सो जाती थी और उठने के बाद हमेशा अपने कपड़े बदल लेती थी। बाद में जब मैं उस समय की तस्वीरें देखती, तो पाती कि उनके लिए फैशन आदि का कोई अर्थ ही नहीं था। किसी के लिए भी नहीं

था। कपड़े बड़े बेढब होते। मेरी माँ के भरे हुए, कोमल चेहरे पर बॉब-कट हेयरस्टाइल फबती ही नहीं थी। पर नज़दीक ही रहने वाली मेरे पिता की रिश्तेदार औरतों को इन सब चीज़ों पर कोई आपत्ति नहीं थी। मेरी माँ की गलती सिर्फ इतनी थी कि वह जो थी, वैसी नहीं दिखती थी। उसे देखकर कहीं से नहीं लगता था कि उसका पालन-पोषण खेतों के बीच हुआ है। या शायद माँ खुद भी उस तरह नहीं दिखना चाहती थी।

जब वह खिड़की पर खड़ी हुई, तो उसे सड़क पर मेरे पिता की कार आती नहीं दिखी। उसके बदले उसने एक बूढ़ी औरत को देखा। वह मिसिज़ नेटरफील्ड थीं। वह शायद अपने घर से चलती-चलती यहाँ तक आ गई थीं। वही घर, जहाँ बरसों बाद, एक हाथ वाला सैनिक रहता था और जो मेरी पढ़ाई का मज़ाक उड़ाया करता था और जहाँ मैंने जीवन में सिर्फ एक ही बार उसकी बॉब-कट पत्नी को पम्प से पानी भरते देखा था। वही मकान जहाँ से बहुत पहले एक बूढ़ी सनकी औरत ने किराने का सामान लेकर आए एक लड़के को कुल्हाड़ी लहराते हुए दौड़ा दिया था, महज़ इसलिए कि वह बटर नहीं लाया था।

मेरी माँ ने उस रोज़ से पहले भी मिसिज़ नेटरफील्ड को कई बार देखा होगा। सम्भव है कि उनमें कभी बात तक न हुई हो। हालाँकि, उनमें हुई थी, यह मुझे पता है। हो सकता है कि उस बातचीत को माँ ने हमेशा याद रखा हो, और पिता ने कहा हो कि कोई फिक्र करने की ज़रूरत नहीं। या हो सकता है कि पिता ने जो कुछ कहा हो, उसे सुन उस औरत के बारे में माँ के शुबहे और बढ़ चुके हों। मेरी माँ मिसिज़ नेटरफील्ड जैसी औरतों के प्रति सहानुभूति रखती थी, कम-से-कम जब तक वैसी औरतें सामान्य व्यवहार करती हों।

पर इस समय वह किसी दोस्ताना या सामान्य व्यवहार की उम्मीद नहीं कर पा रही है। वह किचन के दरवाज़े से बेहद तेज़ी-से दौड़कर बाहर निकली, पालने से मुझे उठाया, पालना व कम्बल-कपड़े वहीं रहने दिए और उतनी ही तेज़ी-से दौड़ते हुए घर में दाखिल हो गई। वह किचन के दरवाज़े को लॉक करने की कोशिश करने लगी। सामने वाले मुख्य दरवाज़े की कोई चिन्ता नहीं थी, क्योंकि वह हमेशा ही बन्द रहता था।

किचन के दरवाज़े के साथ एक समस्या थी। जहाँ तक मुझे पता है, उसमें कभी कोई चिटकनी थी ही नहीं। रात के समय किसी एक कुर्सी को दरवाज़े से भिड़ा दिया जाता था, उसे टेढ़ा करके ऐसे लगाया जाता था कि वह दरवाज़े के हैंडल से एकदम अटक जाए। कोई ज़रा-सा भी धक्का देगा, तो कुर्सी ज़ोर की आवाज़ करेगी। घर को सुरक्षित रखने का यह बेहद लापरवाह या कहें राम-भरोसे तरीका था। पिता की दराज़ में एक रिवॉल्वर

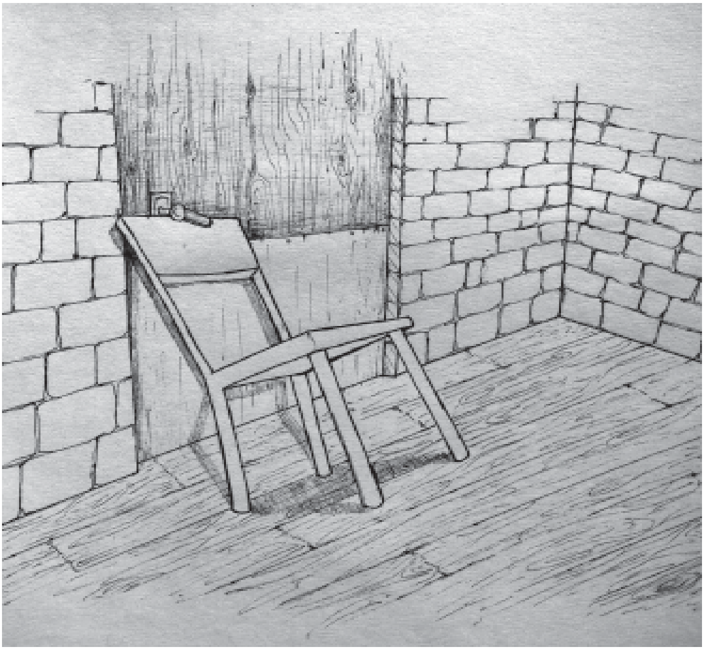

हमेशा होती थी। उनके पास एक राइफल थी और कुछ शॉटगन्स भी। जिस व्यक्ति को हर हफ्ते किसी-न-किसी घोड़े को गोली मारनी हो, उसके पास ये सब चीज़ें होना अस्वाभाविक नहीं था। ज़ाहिर है कि वे इनमें गोलियाँ भरकर नहीं रखते थे।

क्या उस समय मेरी माँ ने कोई हथियार उठा लेने के बारे में सोचा होगा? क्या उन्होंने अपने पूरे जीवन में कभी बन्दूक उठाकर देखी होगी? क्या कभी उन्होंने बन्दूक में गोली भरी होगी?

क्या उसके दिमाग में यह खयाल आया होगा कि वह बूढ़ी औरत महज़ एक पड़ोसी की तरह उसके घर आई है? मुझे नहीं लगता। उस औरत के चलने के तरीके में ही कुछ ऐसा ज़रूर रहा होगा, जिन इरादों के साथ वह हमारे बरामदे में आ रही थी, उसे देख मेरी माँ को कहीं से यह नहीं लगा होगा कि वह किसी दोस्ताना विचार के साथ आ रही है।

हो सकता है कि मेरी माँ उस समय मन ही मन प्रार्थनाएँ पढ़ रही हो, पर उसने कभी उस बारे में बताया नहीं।

उसे पता चल गया कि जैसे वह दौड़कर किचन के दरवाज़े से भीतर घुसी है, वह औरत पालने में पड़े

कपड़ों को उलट-पुलट रही है, उसने कम्बल उठाकर फेंक दिया है। वह देख माँ की इतनी हिम्मत भी न हुई कि वह खिड़कियों के परदे गिरा दे। वह मुझे अपनी बाँहों में सहेजे घर के ऐसे कोने में छिप गई, जहाँ उसे कोई देख न सके।

दरवाज़े पर कोई दस्तक नहीं हुई। किसी ने भिड़ाई हुई कुर्सी को धक्का भी नहीं मारा। कोई आवाज़ नहीं। कोई हरकत नहीं। कपबोर्ड के पीछे छिपी मेरी माँ मन ही मन दुआ कर रही थी कि उस औरत ने अपना विचार त्याग दिया होगा और अब तक चली गई होगी।

पर ऐसा नहीं था। वह औरत हमारे घर के चारों ओर घूम रही थी। हर खिड़की के सामने रुक जाती थी। खिड़की पर लगे काँच पर नाक गड़ा-गड़ाकर वह भीतर झाँक रही थी। देर तक अन्दर देखती रहती। उस दिन सूरज की रोशनी सुखद थी, इसलिए सारे परदे खुले हुए थे। वह औरत ज़्यादा लम्बी नहीं थी, फिर भी उसे अन्दर झाँकने के लिए उचकना नहीं पड़ रहा था।

छिपी हुई मेरी माँ को यह सब कैसे पता? मुझे गोद में उठाए वह पूरे घर में दौड़ तो नहीं रही थी, कभी यहाँ, कभी वहाँ तो छिप नहीं रही थी, वह एक ही जगह आतंकित रुकी हुई थी, फिर उसे यह सब कैसे पता?

नीचे तहखाना भी था। उसकी खिड़कियाँ इतनी छोटी थीं कि कोई भीतर घुस न सके, लेकिन उसके दरवाज़े में अन्दर की तरफ से कोई कड़ी नहीं थी। अगर अँधेरे में कोई वहाँ फँस जाए, तो वह बेहद डरावना अनुभव हो सकता था। मान लो कि अगर वहीं से यह औरत घर के भीतर दाखिल होने में सफल हो जाए, तो?

कमरे तो ऊपर पहली मंज़िल पर भी थे, लेकिन वहाँ तक पहुँचने के लिए मेरी माँ को वह बड़ा वाला कमरा पार करना होता। वही वाला कमरा, जहाँ बरसों बाद मेरी पिटाई होने वाली थी।

मुझे याद नहीं कि मेरी माँ ने पहली बार यह कहानी मुझे कब सुनाई थी, पर इतना ज़रूर पता है कि इस कहानी के शुरुआती संस्करण इस तफसील के बाद समाप्त हो जाते थे कि - ...और मिसिज़ नेटरफील्ड खिड़की पर अपना चेहरा सटाए अन्दर झाँकती रहीं, काँच पर वह अपने हाथ फिराती रहीं और उतनी देर तक माँ उसी जगह छिपी रही।

पर बाद के संस्करणों में कहानी का अन्त बदल गया। उसमें अधीरता आ गई, क्रोध भी आ गया। दरवाज़े पर दस्तकें भी आ गईं या उन्हें धक्का देने की कोशिशें भी। चिल्लाने का कभी कोई ज़िक्र नहीं रहा। बूढ़ी औरत शायद इतनी बूढ़ी थी कि उसकी साँसों में चिल्लाने लायक ताकत ही न रही हो। या जब वह ये सारी हरकतें कर-करके थक गई हो, तो अन्ततः भूल ही गई हो कि वह आखिर इस जगह आई

क्यों थी।

खैर, थककर वह चली गई। अन्त हर बार यही होता था। घर की परिक्रमा करते हुए खिड़की और दरवाज़ों से झाँकने के बाद वह औरत वहाँ से चली गई। अन्ततः मेरी माँ के भीतर इतनी हिम्मत जुटी कि उस सन्नाटे में उसने बाहर निकलकर ताक-झाँक की और पाया कि मिसिज़ नेटरफील्ड वहाँ से जा चुकी हैं।

जब तक मेरे पिता घर नहीं लौट आए, तब तक उसने किचन के दरवाज़े पर भिड़ाई गई कुर्सी हटाई नहीं थी।

***

मैं यह नहीं कहना चाहती कि मेरी माँ अक्सर यह किस्सा सुनाती थी। यह उसके कथा-भण्डार का नियमित हिस्सा नहीं था। वह अक्सर स्कूल के अपने संघर्ष बताती थी। वहाँ तक पहुँचने के संघर्षों के बारे में। अल्बर्टा के जिस स्कूल में उसने पढ़ाई की थी, वहाँ के बच्चे घोड़ों पर सवार होकर आते थे। वे सभी साधारण बच्चे थे और उनकी शरारतें-तरकीबें भी साधारण ही थीं।

मैं उसकी आवाज़ के उतार-चढ़ाव और उसकी गहराई से ही भाँप जाती थी कि वह कहना क्या चाहती है। दूसरे उसे इस तरह नहीं समझ पाते थे। मैं उसकी दुभाषिया थी। कई बार

मैं दुख से भर जाती, जब मुझे उसके चुटकुलों को लोगों को पूरे विस्तार से समझाना पड़ता। तब मैं यह पाती, लोग उस समय उससे दूर भाग जाना चाहते थे।

उस रोज़ मिसिज़ नेटरफील्ड के आने का किस्सा कोई ऐसी बात नहीं थी, जिसे मैं उसके मुँह से बार-बार सुनना चाहती होऊँ। पर मुझे वह किस्सा हमेशा याद रहता था। मुझे याद है, मैंने कई बार उससे पूछा था, "फिर उस औरत का हुआ क्या?"

उसने बताया, "शायद उसके रिश्तेदार उसे ले गए। हाँ, शायद। वे लोग उसे यहाँ मरने के लिए अकेला नहीं छोड़ना चाहते होंगे।"

***

शादी करने के बाद मैं वैंकूवर चली गई। वहाँ अपने पीछे छूटे कस्बे से प्रकाशित होने वाला साप्ताहिक अखबार मुझे हमेशा मिलता रहा। शायद मेरे पिता और उनकी नई पत्नी ने उस अखबार में जाकर मेरा नया पता लिखवा दिया था और उसका शुल्क भी भर दिया था, ताकि दूर रहकर भी मैं अपने कस्बे के बारे में जान सकूँ। वह नए शहर के मेरे नए घर में हर हफ्ते डाक से आता था। शायद ही कभी मैं उसे खोलकर देखती।

पर एक बार संयोग से उसे खोलकर पढ़ते हुए मेरा ध्यान एक नाम पर गया - नेटरफील्ड। वह किसी महिला का नाम था और वह ओरेगॉन में पोर्टलैंड में रहती थी। उसके छपे हुए पते से यह पता चला। उसने अखबार को एक पत्र लिखा था। मेरी ही तरह उसे भी यह अखबार डाक से मिलता था। मेरी ही तरह उस औरत का भी मूल कस्बा वही था। उसने उस कस्बे में अपना बचपन गुज़ारा था और उन अनुभवों पर एक कविता लिखी थी।

मैं जानती हूँ घास से ढँकी पहाड़ियों को, उसके नीचे एक नदी बहती है,
सुकून और आनन्द की जगह है वह,
मेरी यादों में वह हर पल रहती है।

उस कविता में कई पद थे। उसे पढ़ते हुए मैंने पाया कि वह उसी नदी के बारे में लिख रही है, जिस नदी पर अब तक मैं सिर्फ अपना हक मानती आई हूँ।

उसने लिखा था, 'इस पत्र के साथ मैं जो ये पंक्तियाँ संलग्न कर रही हूँ, वह पहाड़ी के पास बसे उस कस्बे में बिताए गए मेरे बचपन की यादें हैं। यदि आपको ये ज़रा-भी भाएँ, तो इन्हें अपने प्रतिष्ठित अखबार में स्थान देने की कृपा करें, मैं आपकी आभारी रहूँगी।'

नदी पर चमकता है सूरज,
अविराम खेलता है अपनी किरणों से।
परली ओर के किनारों पर,
खिलते हैं मदमाते जंगली फूल।

वह हमारा किनारा था। मेरा किनारा। अगले पद में मैपल वृक्षों का ज़िक्र किया गया था, वह गलत था, क्योंकि मुझे याद है, वहाँ मैपल नहीं, कुछ और ही विशालकाय वृक्ष थे। किसी

अनजान रोग से वे सब अब सूख के ठूँठ बन चुके थे।

उस पत्र ने बाकी सारी चीज़ें मेरे आगे स्पष्ट कर दीं। उस महिला ने लिखा था, “मेरे पिता जिनका नाम नेटरफील्ड था, उन्होंने 1883 में सरकार से ज़मीन का एक टुकड़ा खरीदा था। बाद में उस जगह का नाम लोअर टाउन पड़ गया। वहाँ की ज़मीन ढुलकते हुए नीचे गिरती थी और जाकर मेटलैंड नदी में समा जाती थी।”

लहरों की झालर इन्द्रधनुष से बनी थी, वहीं मैपल्स की घनी छाँव भी फैली थी।

नदी जैसे पानी का खेत थी, निरे सफेद हंस झुण्ड में उस पर तैरते थे।

उसने इस कविता में उन दृश्यों को छोड़ दिया था, जिनमें बारिश के दिनों में वह पूरा इलाका कीचड़ से भर जाता था और घोड़ों की टापों के निशान उभरे होते थे। उसने वहाँ बनने वाली खाद का ज़िक्र भी नहीं किया था। मैं उसकी जगह होती, तो खुद भी इनका ज़िक्र न करती।

दरअसल, मैंने भी उन सारे दृश्यों पर किसी ज़माने में कविताएँ लिखी थीं, बिलकुल इसी कविता के स्वभाव जैसी, हालाँकि मेरी कविताएँ खो गईं। उन्हें मैंने मन ही मन याद रखा था। वे कविताएँ मैंने उन्हीं दिनों लिखी थीं, जब अपनी माँ की हरकतों को मैं सहन नहीं कर पाती थी। वही दिन थे, जब मेरे पिता अपनी सारी क्रूरताएँ मुझ पर ही उतार देते थे। उस ज़माने के लोगों की भाषा में कहूँ, तो पीट-पीटकर मेरा कीमा बना देते थे।

इस महिला ने उस पत्र में लिखा था कि वह 1876 में पैदा हुई थी। जब तक उसकी शादी नहीं हुई, तब तक का जीवन उसने अपने पिता के ही घर में गुज़ारा था। यह वही घर था, जो सड़क के आखिरी छोर पर बसा हुआ था और जिसके बाद एक बड़ा-सा भू-भाग खाली था और जहाँ से सूरज का उगना एकदम साफ दिखता था।

वह हमारा घर था।

सम्भव है कि मेरी माँ को कभी यह पता ही न चल पाया, कभी भी नहीं, कि हमारा ही मकान था, जिसमें एक ज़माने में नेटरफील्ड परिवार रहा करता था और उस रोज़ वह बूढ़ी औरत खिड़कियों के भीतर इसलिए झाँक रही थी कि वह अपने ही घर के भीतर एक बार देख लेना चाहती थी।

यह सम्भव है।

आज जब मैं उतनी बूढ़ी हो गई हूँ, कि पुरानी बातों और पुराने रिकॉर्ड्स में मेरी दिलचस्पी हद दर्जे तक बढ़ गई है, मैं पुरानी-पुरानी चीज़ों को खोजने के थकाऊ कामों में लगी रहती हूँ, इस उमर में आकर मुझे पता चलता है कि नेटरफील्ड द्वारा वह मकान बेचे जाने और मेरे माँ-बाप द्वारा उस मकान को खरीदे जाने के बीच, उस मकान में कई और परिवार भी रहे थे। आप सोच सकते हैं कि जब वह औरत

अभी ज़िन्दा थी, तब भी उसके घरवालों ने यह मकान किसी और को क्यों बेच दिया था? क्या वह विधवा हो गई थी? क्या उसके पास के सारे पैसे खत्म हो चुके थे? किसे पता? और वह कौन-सा रिश्तेदार था, जो आकर एक दिन उसे उस कस्बे से ले गया, जैसा कि मेरी माँ बताती थी?

शायद वह उसकी बेटी थी, वही औरत जिसकी चिट्ठी अखबार में छपी है, जो ओरेगॉन में रहती है। शायद वही अपने बचपन के कस्बे में आई थी और अपनी सनक गई बूढ़ी माँ को वहाँ से ले गई थी। शायद वह बूढ़ी औरत उस रोज़ पालने में अपनी उसी बच्ची को खोज रही थी, जो बड़ी होने के बाद उससे इतनी दूर जा चुकी थी। मेरी माँ द्वारा मुझे गोद में उठाकर वहाँ से दौड़ जाने के तुरन्त बाद। बकौल मेरी माँ, मेरी प्रिय ज़िन्दगी को उस रोज़ बचा लेने के तुरन्त बाद।

शादी के बाद जिस इलाके में मैं थी, उसकी बेटी उस इलाके से ज़्यादा दूर नहीं रहती। मैं उसे पत्र लिख सकती थी, शायद उसके घर भी जा सकती थी। पर यह सब तब, अगर खुद मैं ही अपनी छोटे-से, नए-नवेले परिवार की समस्याओं से न जूझ रही होती। यह सब तब, अगर उस समय मैं अपने बेहद असन्तोषजनक लेखन से लड़ न रही होती।

पर उस समय इस पूरे मुद्दे पर जिस एक व्यक्ति से मैं शिद्दत से बात करना चाहती थी, वह थी मेरी माँ, जो कि तब तक इस दुनिया से जा चुकी थी।

माँ की आखिरी बीमारी, उनके आखिरी दर्शन या उनकी अन्त्येष्टि के लिए मैं नहीं गई। मेरे दो छोटे बच्चे थे और वैंकूवर में ऐसा कोई नहीं था, जिनके पास मैं उन बच्चों को छोड़ सकती। हमारे पास इतने पैसे भी नहीं थे कि हम वहाँ तक का टिकट खरीद सकें। मेरे पति को अन्त्येष्टि जैसे औपचारिक अवसर पसन्द भी

नहीं थे, पर उसे क्यों दोष देना? खुद मैं भी वैसा ही महसूस करती थी। हम हमेशा कहते हैं कि कुछ चीज़ों को कभी माफ नहीं किया जा सकता, या कुछ चीज़ों के लिए हम कभी खुद को माफ नहीं कर सकते। लेकिन फिर भी हम कर देते हैं - हम हमेशा माफ कर देते हैं।

एलिस मुनरोः कनाडियन, अँग्रेज़ी भाषा की लघु-कथा लेखक जिन्होंने साहित्य के लिए 2013 में *नोबेल पुरस्कार* प्राप्त किया। इसके अलावा *गवर्नर जनरल्स अवॉर्ड*, *मैन बुकर अन्तरराष्ट्रीय पुरस्कार* व *गिलर पुरस्कार* समेत अन्य पुरस्कारों से सम्मानित। ऐसा वर्णित किया जाता है कि इन्होंने लघु-कथाओं की संरचना में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया था, खासकर कहानियों में आगे और पीछे समय में जाने की प्रकृति में। इनकी रचनाओं का तेरह भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। मुनरो की कहानियों के बारे में कहा जाता है कि उनमें घोषणाएँ कम एवं छिपी हुई बातें ज़्यादा होती हैं और बातों का जुलूस निकलने की बजाय कोई भी बात धीरे-से और सामान्य तरीके से कह दी जाती है।

अँग्रेज़ी से अनुवादः गीत चतुर्वेदीः कवि, लघु कहानी लेखक, पत्रकार और अनुवादक। कविता के लिए *भारत भूषण पुरस्कार* और उपन्यास के लिए *कृष्ण प्रताप पुरस्कार* से सम्मानित।

सभी चित्रः भारती तिहोंगरः जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली से फाइन आर्ट्स में स्नातक। स्कूल ऑफ कल्चर एंड क्रिएटिव एक्सप्रेशंस, अम्बेडकर यूनिवर्सिटी से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर। स्वतंत्र रूप से चित्रकारी करती हैं।

अनुवादक की ओर सेः यह कथानक सर्वप्रथम सितम्बर 2011 में *न्यू यॉर्कर* पत्रिका में प्रकाशित हुआ था और 2012 में 'मैक्कललैंड और स्टीवर्ट' प्रकाशक द्वारा प्रकाशित लघुकथा संग्रह में छपा था।

एलिस मुनरो की यह कहानी उनके आखिरी कहानी संग्रह की शीर्षक-कथा है, जो कि 2012 में प्रकाशित हुआ। मूल रूप से पत्रिका *न्यू यॉर्कर* में प्रकाशित यह कृति उनके हालिया बरसों के प्रतिष्ठित आत्मकथात्मक लेखन का मुख्य हिस्सा है। मुनरो की कहानियों की तफ्सीलें खुद उन्हीं के जीवन से बनती रही हैं और खुद मुनरो ने यह बात कई दफा स्वीकार भी की है। इस आत्मकथात्मक रचना को उन्होंने कहानी की शक्ल दी है। उनके आखिरी संग्रह *डियर लाइफ* की सभी कहानियाँ दरअसल उनके आत्मकथात्मक लेखन का ही हिस्सा हैं। यहाँ कहानी की गल्प-शैली और आत्मकथाओं की परिचित असम्बद्धता का मिश्रण देखा जा सकता है। मुनरो की कहानियों की भावभूमि अत्यन्त समृद्ध होती है, बावजूद उनके आलोचक यह हमेशा रेखांकित करते हैं कि वृहत भावनात्मक दृश्यों की रचना करते समय भी यह लेखिका भावनात्मक उभारों का बरबस दमन करती चलती हैं। मुनरो एक ही कहानी में कई बार सुन्दर-सुगठित भाषा का प्रयोग करती हैं और उसी कहानी में अपनी उस गठान को तोड़ निहायत खाँटी भी हो जाती हैं। उनकी कहानियाँ उस जगह से आगे बढ़ जाती हैं, जहाँ वे शुरू होती हैं। इस तरह वे यात्रा की मनमौजी रेखाओं का अंकन करती हैं। उनकी नायिकाएँ अमूमन उनकी माँ को अपने चरित्र के विकास का मॉडल बनाती हैं। उस माँ के चरित्र के कुछ पहलुओं को इस कहानी में भी चित्रित किया गया है। यह कहानी जीवन की तमाम कठिनाइयों के विरुद्ध उम्मीदवार सुन्दरताओं का अभिवादन है।